राग और आत्मा भिन्न-भिन्न हैं

भगवान आत्मा शुद्ध चैतन्य उपयोगस्वरूप है और उसकी व्यक्तता प्रगटता जानने-देखनेरूप ही होती है। इसकी शक्ति में से विकार का परिणाम प्रगट होना अशक्य है - ऐसा भगवान आत्मा चैतन्यशक्तिरूप स्वभावमात्र से अर्थात् जानने देखने के स्वभावभाव से जानता है कि' मैं एक हूँ।' जानने-देखने के स्वभावभाव से मैं एक हूँ। देखो ! यहाँ प्रभुत्वशक्ति ली है। आत्मा में एक प्रभुत्वशक्ति है, जिससे वह अखण्ड प्रताप से स्वतंत्ररूप से शोभायमान है - ऐसे आत्मा की विश्व को प्रकाशित करने में चतुर, विकासरूप, निरन्तर शास्वती सम्पदा है। यह बाह्य मकान, कुटुम्ब आदि सम्पदा आत्मा की नहीं है, यह तो जड़ है।

यहाँ तो कहते हैं कि भगवान आत्मा चैतन्यशक्ति के स्वभाव की सामर्थ्य से ऐसा जानता है कि परमार्थ से मैं एक हूँ। मैं और राग - इसप्रकार दो मिलकर एक नहीं; किन्तु राग से भिन्न मैं चैतन्यशक्तिमात्र एक हूँ।

यद्यपि मेरा चैतन्य स्वभाव और जगत के दूसरे जड़ द्रव्य एक क्षेत्र में रहते हैं, तथापि भिन्न-भिन्न हैं। आत्मा और जड़ पदार्थ यद्यपि एक क्षेत्र में रहते हैं, तथापि श्रीखण्ड की खटास व मिठास एक क्षेत्र में रहकर भी पूर्णतया भिन्न हैं; उसीप्रकार आत्मा का चैतन्यलक्षण और अन्य द्रव्यों का जड़स्वभाव एकमेकरूप से एक क्षेत्र में रहते हैं; तथापि स्पष्ट अनुभव में आते हुए स्वादभेद के कारण भिन्न हैं। भगवान आत्मा का स्वाद अनाकुल, आनन्दरूप और कर्म के फल/राग का स्वाद दु:खरूप है। इसप्रकार दोनों भिन्न-भिन्न हैं।

भगवान आत्मा अनाकुल आनन्द से भरा हुआ परिपूर्ण प्रभु पदार्थ है। अनाकुल आनन्द का वेदन करनेवाली पर्याय का स्वाद राग के स्वाद से सर्वथा भिन्न ही है। **ह्न प्रवचनरत्नाकर भाग-2 पृष्ठ: 108-109**

वीतराग-विज्ञान

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का , घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : 25 283 अंक : 7

प्रवचनसार पद्यानुवाद

शुभोपयोगप्रज्ञापनाधिकार

विशारद सूत्रार्थ संयम-ज्ञान-तप में आढ्य हों।
उन श्रमणजन को श्रमणजन अति विनय से प्रणमन करें।।२६३।।
सूत्र संयम और तप से युक्त हों पर जिनकथित।
तत्त्वार्थ को ना श्रद्धहैं तो श्रमण ना जिनवर कहें।।२६४।।
जो श्रमणजन को देखकर विद्वेष से वर्तन करें।
अपवाद उनका करें तो चारित्र उनका नष्ट हो।।२६५।।
स्वयं गुण से हीन हों पर जो गुणों से अधिक हों।
चाहे उनसे नमन तो फिर अनंतसंसारी हैं वे।।२६६।।
जो स्वयं गुणवान हों पर हीन को वंदन करें।
दृगमोह में उपयुक्त वे चारित्र से भी भ्रष्ट हैं।।२६७।।
सूत्रार्थविद जितकषायी अर तपस्वी हैं किन्तु यदि।
लौकिकजनों की संगति न तजे तो संयत नहीं।।२६८।।
निर्ग्रन्थ हों तपयुक्त संयमयुक्त हों पर व्यस्त हों।
इहलोक के व्यवहार में तो उन्हें लौकिक ही कहा।।२६९।।
यदि चाहते हो मुक्त होना दुखों से तो जान लो।
गुणाधिक या समान गुण से युक्त की संगति करो।।२७०।।

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

योगी को एकान्त चाहिये

पूज्यपाद आचार्य श्री देवनन्दिस्वामी के प्रसिद्ध ग्रन्थ इष्टोपदेश के 40 वें श्लोक पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। मूल श्लोक इसप्रकार है ह्न

इच्छत्येकान्तसंवासं निर्जनं जनिताऽदरः।
निजकार्यवशात्किंचिदुक्त्वा विस्मरति द्रुतम्॥ 40॥

निर्जनता के लिए जिसको आदर उत्पन्न हुआ है ह्न ऐसा योगी एकान्तवास को चाहता है और निज कार्यवश कुछ बोल गया हो तो उसे वह शीघ्र ही भूल जाता है।

(गतांक से आगे...)

प्रश्न : लोक में प्रभावना के लिए ज्ञानी उपदेश दे सकता है कि नहीं ?

उत्तर : अपने शुद्ध आनन्दघन स्वभाव में एकाग्रता करने को प्रभावना कहते है और यही सच्ची प्रभावना है। जिनागम में प्रभावना का कथन भी दो प्रकार से होता है ह्न 1) निश्चय प्रभावना और 2) व्यवहार प्रभावना।

इसमें निज भगवान आत्मा के ध्यानपूर्वक उसी में स्वरूपलीनता करना निश्चय प्रभावना है और उसके साथ अन्य जीवों को उपदेशादि देने का जो भाव आता है, वह व्यवहार प्रभावना है।

उपदेशादि देने के भाव से तो बंध ही होता है और अन्य जीव जो इस उपदेश के निमित्त से समझते है, वे भी अपनी उपादानगत योग्यता से ही समझते हैं। इसलिए अपने शुद्ध चिदानन्द भगवान आत्मा में जितनी एकाग्रता होती है, उतना ही लाभ होता है। उसके अतिरिक्त जिस भाव से तीर्थंकर प्रकृति का बंध हो, वह भाव भी लाभदायक नहीं है। आत्मा उस भाव का कर्त्ता भी नहीं है तो फिर उपदेश और वाणी का कर्त्ता कैसे हो सकता है ?

मुनिराज को भी शरीरादि की स्थिरता के लिए भोजनादि संबंधी आवश्यक विकल्प होते हैं; किन्तु वे उसे क्षणभर पश्चात् ही भूल जाते हैं।

आहारादि किसी विशिष्ट विधि के लिये श्रावकों को कहना पड़े तो कहते हैं; किन्तु उसे भी तत्काल भूल जाते है। मुनि के उद्देश्य से बनाया गया आहार हो तो

ग्रहण नहीं करते।

धर्मात्मा जीव सच्चे स्वार्थी हैं ह्न उन्हें स्व + अर्थ अर्थात् स्व का ही प्रयोजन है। एकमात्र वीतरागता ही साध्य है, वे उससे ही लाभ मानते हैं और जिससे वीतरागता बढ़े ह्न ऐसा ही कार्य करते हैं।

लाख बात की एक बात यह है कि मुनिराज को तो सिर्फ वीतरागता का ही प्रयोजन है। वीतरागता के सिवा अन्य समस्त बातों को वे तत्काल ही भूल जाते हैं।

पंचमहाव्रतादि पालन अथवा उपदेशादि देने का शुभविकल्प मुनि को आता है तो आवे; किन्तु उन्हें उसमें कर्त्ताबुद्धि अथवा लाभबुद्धि नहीं होती। वे उसके विकल्पों में अटकते नहीं है, वे बंधभाव को अपना नहीं मानते और उसे तुरन्त ही भूल जाते है। यही सच्चा मार्ग है। राग मार्ग और वीतराग मार्ग में बहुत अन्तर है।

धर्मात्मा चक्रवर्ती 96000 हजार रानियों के बीच रहते हैं। वहाँ क्षणिक वासना का विकल्प आ जावे तो उसे अपनी कमजोरी समझते हैं और विकल्प का समाधान नहीं होने पर वासना को पूर्ण करके अगले ही क्षण ध्यान में बैठ जाते हैं और आत्मा का अनुभव करते हैं।

देखो परिणामों की दशा ! एक समय पहले वासना और एक समय बाद ही आत्मा का स्पर्श। दृष्टि में राग का आदर नहीं है; इसलिये राग की दृढ़ता भी नहीं है।

वीतराग त्रिलोकीनाथ सर्वज्ञ परमात्मा कहते हैं कि सम्यग्दृष्टि अपने शुद्ध स्वरूप में लीन हो और उससमय कोई विकल्प आ भी जावे तो वह उस विकल्प को तत्काल ही भूल जाता है। संयम के हेतुरूप, ममता घटानेरूप अथवा दानादि देनेरूप कोई भी शुभाशुभ विकल्प आवे तो उसे भी बंध का कारण जानकर तत्काल ही भूल जाता है।

दशलक्षण धर्म में त्यागधर्म का दिन आता है, तब लोग पुस्तक देने से ज्ञानदान अथवा वस्त्रादि देने से त्यागधर्म मानते हैं। पर भाई ! यह त्यागधर्म नहीं है। यह तो शुभविकल्प है। त्यागधर्म तो राग का अभाव कर शुद्धस्वभाव में लीन होना है। इसके अतिरिक्त समस्त विकल्पों को धर्मी जीव बंध ही जानता है।

लोग कहते हैं कि यह तो एकांत है; किन्तु भाई ! यह सम्यक् एकान्त है। वीतरागता प्रगट करने का एकमात्र यही उपाय है। वस्तुस्वरूप, धर्म का स्वरूप

क्या है ? उसकी यथार्थ समझ होना अत्यन्त आवश्यक है। चारित्र की बात तो बाद की है, प्रथम यथार्थ श्रद्धान तो कर !

जगत के जीव तीर्थंकर प्रकृति के बंधन में लाभ मानते हैं; किन्तु तीर्थंकर प्रकृति में जो कर्मबंधन हुआ है, वे तो जड़ रजकण है और उसका उदय भगवान को केवलज्ञान होने के पश्चात् आता है। उस कर्म के उदय से समवशरण आदि की रचना होती है, किन्तु उससे भगवान को कोई लाभ नहीं होता; अत: धर्मी जीव शुभबंध अथवा उसके फल में कुछ भी लाभ नहीं मानता।

अब आचार्य पूज्यपादस्वामी धर्मी का विशेष स्वरूप बताने के लिए आगामी 41वाँ श्लोक कहते हैं ह्न

ब्रुवन्नपि हि न ब्रुते, गच्छन्नपि न गच्छति।
स्थिरीकृतात्मतत्त्वस्तु, पश्यन्नपि न पश्यति ।।41।।

जिसने आत्मतत्त्व के विषय में स्थिरता प्राप्त की है, वह बोलता होने पर भी नहीं बोलता, चलता होने पर भी नहीं चलता और देखता होने पर भी नहीं देखता है।

जिसने आत्मस्वरूप के विषय में स्थिरता प्राप्त कर ज्ञायक चिदानन्द की दृष्टि ज्ञान करके अनुभव किया है ह्न ऐसा योगी धर्मात्मा बोलते हुए भी नहीं बोलता; क्योंकि वह वाणी का कर्त्ता नहीं है, मात्र ज्ञाता-दृष्टा ही है। चलता हुआ होनेपर भी नहीं चलता और देखता हुआ होने पर भी नहीं देखता। **(क्रमश:)**

त्रसपर्याय की दुर्लभता से लेकर रत्नत्रयरूप बोधि की दुर्लभता तक की अनेक दुर्लभताओं में मनुष्य पर्याय की दुर्लभता एक बीच का बिन्दु है। वह एक ऐसा बिन्दु है, जहाँ तक का अतिकठिन रास्ता जैसे भी हो; पर हम सबने पार कर लिया है। उससे भी आगे आयें तो देश, उत्तम कुल, वीतरागी धर्म और उसका श्रवण भी हमें सहज उपलब्ध हो गया है।

इस महान उपलब्धि की सार्थकता सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप बोधि की उपलब्धि में ही है। यदि इस महादुर्लभ मानव जीवन को पाकर भी हमने बोधि की प्राप्ति नहीं की तो इसका पाना, न पाना बराबर ही समझना चाहिये।

ह्न बारह भावना : एक अनुशीलन, पृष्ठ-154

आत्मा किसका कर्त्ता-भोक्ता ?

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार की 18 वीं गाथा पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्म-रसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है।

गाथा मूलत: इसप्रकार है ह्न

कत्ता भोत्ता आदा पोग्गलकम्मस्स होदि ववहारा।
कम्मजभावेणादा कत्ता भोत्ता दु णिच्छयदो ॥18॥

आत्मा व्यवहार से पुद्गल कर्म का कर्त्ता-भोक्ता है और आत्मा (अशुद्ध) निश्चयनय से कर्म जनित भावों का कर्त्ता-भोक्ता है।

(गतांक से आगे...)

(2) अशुद्ध निश्चयनय से यह जीव समस्त मोह-राग-द्वेषादि भावकर्म का कर्त्ता एवं भोक्ता है।

पर्याय में जो राग-द्वेष, हर्ष-शोक आदि विकारी भाव होते हैं, वे अपनी ही पर्याय होने से निश्चय है और वे भाव विकारी होने से अशुद्ध हैं; इसप्रकार अशुद्ध निश्चयनय से आत्मा अपने विकारी परिणाम का कर्त्ता और हर्ष-शोक का भोक्ता है। दृष्टि के विषय में तो ऐसा कहते हैं कि आत्मा रागादि का कर्त्ता-भोक्ता है ही नहीं; किन्तु यहाँ तो अपनी अशुद्ध पर्याय का ज्ञान कराया है। जीव अपनी पर्याय में अशुद्धता स्वयं करता है, कोई दूसरा उसे अशुद्धता नहीं कराता, अत: निश्चय से जीव उनका कर्त्ता-भोक्ता है; परन्तु वह रागादिभाव अशुद्ध हैं, इसलिये उनको अशुद्धनिश्चयनय का विषय कहा है।

(3) अनुपचरित असद्भूतव्यवहार से यह जीव नोकर्म (देहादि) का कर्त्ता है।

पहले कर्म का कर्त्ता-भोक्ता कहा, उसमें '**निकटवर्ती**' शब्द प्रयोग किया था। यहाँ उस शब्द को नहीं लिया। देहादि की क्रिया उसके स्वयं के कारण से स्वतन्त्ररूपेण होती है। वस्तुत: आत्मा उसका कर्त्ता नहीं है; किन्तु निमित्तरूप में इच्छा हो और शरीर चले तो वहाँ अनुपचरितअसद्भूतव्यवहार से जीव को शरीर का कर्त्ता कहा जाता है। आत्मा की इच्छा के कारण शरीर नहीं चलता । आत्मा में शरीरादि असद्भूत होने पर भी शरीर की क्रिया के समय जीव के निमित्तपने का ज्ञान कराने मात्र के लिये

व्यवहार कहा है। व्यवहार से आत्मा कर्त्ता है अर्थात् निश्चय से तो शरीरादि की क्रिया उसके अपने काल में अपने कारण से होती है; आत्मा को कर्त्ता कहना तो व्यवहार है। निश्चय से जब वस्तु स्वयं ही कर्त्ता है, तब दूसरे को कर्त्ता कहना व्यवहार हुआ।

यह बात सभी बोलों में लागू होती है।

(1) पहले कर्म का कर्त्ता-भोक्ता व्यवहार से कहा ह्न उसमें निश्चय से कर्त्ता तो जड़कर्म स्वयं ही है और व्यवहार से जीव को कर्त्ता कहा है।

उसीप्रकार निश्चय से तो कर्म का फल कर्म में ही आता है, आत्मा उसका भोक्ता नहीं; किन्तु व्यवहार से आत्मा उसका भोक्ता कहा जाता है।

निश्चय को रखकर ही व्यवहार होता है। निश्चय से तो कर्म का कर्त्ता और भोक्ता वह कर्म स्वयं ही है, वह उसके परिणाम का स्वकाल है, और उस समय निमित्त रूप से जीव को कर्त्ता-भोक्ता कहना व्यवहार है। निश्चय को लक्ष्य में रखकर ही व्यवहार कहने में आता है।

(2) अशुद्धनिश्चयनय से आत्मा को रागादि का कर्त्ता-भोक्ता कहा तथा व्यवहार से आत्मा को कर्म का कर्त्ता-भोक्ता कहा ह्न इस भाँति दोनों बोलों में परस्पर निश्चय-व्यवहार हो गया।

(3) देह, वाणी आदि का कर्त्ता-भोक्ता आत्मा को कहना अनुपचरितअसद्भूत-व्यवहार है। तो निश्चय क्या है ? देह, वाणी आदि की क्रिया उनके अपने कारण से स्वयं होती है, यह निश्चय है; तब रागी जीव उसमें निमित्त है ह्न इसलिये उसको देहादि नोकर्म का कर्त्ता व्यवहार से कहते हैं।

(4) उपचरितअसद्भूतव्यवहार से घट-पट-शकटादि (घड़ा, वस्त्र, गाड़ी आदि) का कर्त्ता हैं। ये सभी क्षेत्र से दूरस्थ पदार्थ हैं, इसलिये उपचरितव्यवहार कहा है। घड़े, मकान, वस्त्रादि का परिणमन तो स्वतन्त्र होता है; परन्तु उससमय रागीजीव निमित्तरूप से मौजूद रहता है ह्न इसका ज्ञान कराने के लिए जीव को उपचरित असद्भूतव्यवहारनय से उनका कर्त्ता कहा जाता है।

स्वभाव की दृष्टि से देखा जाय तो आत्मा घट-पटादि का निमित्तकर्त्ता भी नहीं है ह्न यह बात समयसार की 100वीं गाथा में स्पष्ट कही है; किन्तु यहाँ वह बात नहीं है। यहाँ तो पर्याय की बात है। समयसार में तो अभेद द्रव्यदृष्टि की बात है। यदि द्रव्य

स्वयं ही निमित्त हो तब तो जहाँ-जहाँ घड़ा वगैरह हो वहाँ-वहाँ वह निमित्त होता ही रहे अर्थात् उसकी मुक्ति तो कभी होवे ही नहीं। यहाँ तो पर्याय में क्षणमात्र का राग है, उसका ज्ञान कराने के लिये उपचार से पर का कर्त्ता कहा गया है। पर की क्रिया उसके अपने ही कारण से होती है ह्न यह निश्चय है, उसमें कहीं जीव का अधिकार नहीं है; पर उससमय कौन-सा रागी जीव निमित्तरूप से था, उसे पहचानने के लिए उसे उपचार से घट-पटादि का कर्त्ता व्यवहार से कहा है।

यह अशुद्धजीव का वर्णन है अर्थात् जिसको अभी रागादि विकल्प होते हैं। ऐसे जीव को यह नय लागू पड़ते हैं। सिद्धों को यह नय लागू नहीं पड़ते। इस गाथा में कुल चार नय कहे हैं :ह्न

(1) निकटवर्ती अनुपचरितव्यवहार से आत्मा कर्म का कर्त्ता और उनके फल का भोक्ता है, किन्तु निश्चय से तो कर्म का कर्त्ता-भोक्ता कर्म स्वयं ही है।

(2) अशुद्धनिश्चय से आत्मा अपने विकारीभाव का कर्त्ता और भोक्ता है।

(3) अनुपचरितअसद्भूतव्यवहार से शरीरादि का कर्त्ता है। वहाँ शरीरादि की क्रिया निश्चय से तो उनके कारण से ही होती है, निमित्तरूप से रागीजीव होता है, उसे व्यवहार से कर्त्ता कहा जाता है।

(4) मकान-वस्त्रादि का कर्त्ता जीव को कहना उपचरितअसद्भूतव्यवहार है। निश्चय से मकान-वस्त्रादिरूप पुद्गलस्कन्ध स्वयं ही परिणमन करते हैं। शिल्पी ने मकान बनाया ह्न ऐसा कहना तो उपचार है, यथार्थ नहीं।

त्रिकाली स्वभाव की दृष्टि में तो आत्मा किसी को निमित्त भी नहीं है। वहाँ तो निमित्तकर्त्तापना भी उड़ा दिया है। पर यहाँ तो मात्र वर्तमान पर्याय का ज्ञान कराने की बात है। सम्यग्दृष्टि जीव स्वभावदृष्टि में पर का निमित्तरूप से भी कर्त्ता नहीं है। पर्याय में अशुद्धता होने से वर्तमान का पर के साथ निमित्त संबंध है, उसका ज्ञान कराने के लिये व्यवहारनय कहा है। इसप्रकार अशुद्धजीव की बात की।

सुख-दु:ख के 3 प्रकार आते हैं :ह्न **(1)** सुख-दु:खरूप जीव के परिणाम ह्न अशुद्धनिश्चय में आते हैं। **(2)** सुख-दु:खरूप कर्मोदय ह्न निकटवर्ती अनुपचरित असद्भूतव्यवहार में आता है। **(3)** सुख-दु:खरूप बाह्यसामग्री ह्न उपचरित असद्भूतव्यवहार में आती है। इसतरह 3 प्रकार से सुख-दु:ख का वर्णन किया।

छहढाला प्रवचन

रे जीव ! सुन, यह तेरे दु:ख की कथा

एक श्वास में अठदस बार, जन्म्यो मर्यो भर्यो दु:खभार।
निकसि भूमि-जल-पावक भयो, पवन प्रत्येकवनस्पति थयो।।४।।

(सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान दौलतरामजीकृत छहढाला पर गुरुदेवश्री के प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।)

(गतांक से आगे ...)

यहाँ कहते हैं कि अरे ! अनादिकाल से परिभ्रमण में रुलते हुए जीव ने चारों गति में अवतार कर-करके महान दु:ख भोगे; उसमें अतिदुर्लभ ऐसा यह मनुष्यभव मिला, जिसमें चौरासी के चक्कर से बाहर निकलने का और मोक्ष के साधने का अवसर हाथ आया है। अब ऐसे अवसर में भी यदि गाफिल रहकर विषय-कषायों में काल गँवायेगा तो हे भाई! अन्धे की तरह तू यह अवसर चूक जायेगा।

एक अन्धे मनुष्य को मोक्षनगरी में प्रवेश करना था। नगरी के कोट में एक ही दरवाजा था। किसी दयावान ने उसको मार्ग दिखाया कि इस गढ़ की दीवार से हाथ लगाकर चलते जाओ, चलते-चलते जब प्रवेशद्वार आये, तब भीतर प्रवेश करके नगरी में पहुँच जाना; बीच में कहीं प्रमाद में मत रुकना। उसके कहे अनुसार गढ़ की दीवार से हाथ लगाकर वह अन्ध मनुष्य फिरने लगा; किन्तु बीच-बीच में प्रमादी होकर कभी पानी पीने को रुके, कभी शरीर खुजाने को रुके; ऐसे चलते-चलते जब दरवाजा निकट आया तो ठीक उसी वक्त वह अपने सिर की खाज खुजलाता हुआ आगे चला गया और दरवाजा पीछे छूट गया । ऐसे वह अंधा मोक्षनगरी में प्रवेश करने का अवसर खोकर फिर से चक्कर में लग गया।

ऐसे ही इस चौरासी के चार गति के चक्कर में बड़ी कठिनाई से मनुष्य अवतार मिला, मोक्षपुरी में प्रवेश करने का अवसर आया और मोक्ष का दरवाजा दिखलाने वाले संत भी मिले; उन सन्तों ने करुणापूर्वक मार्ग भी दिखाया कि अन्तर में चैतन्यमय आत्मा को स्पर्श करके चले आओ, चैतन्य को स्पर्शकर (लक्ष्य में लेकर) चलने से मोक्षनगरी में प्रवेश करने का 'रत्नत्रय दरवाजा' आयेगा; किन्तु ऐसा करने

की बजाय उस अन्धे मनुष्य की तरह जो अज्ञानी जीव राग में या देह की क्रिया में धर्म मानकर उसी की सँभाल में (देहबुद्धि में) रुक जाये और आत्मा को पहचानने की परवाह नहीं करे, वह मूर्ख मोक्षनगरी में प्रवेश करने का यह अवसर चूक जायेगा और फिर चौरासी के चक्कर में पड़कर चार गति में रुलेगा।

अतः हे जीव ! उस अन्धे की तरह तू भी इस अवसर को मत चूक जाना। देह की या मानादि की परवाह छोड़कर आत्मा के हित की सँभाल करना।

जब एकेन्द्रिय में था, तब तू अनंतबार गाजर-मूली के साथ में मुफ्त में बिका; अब अभिमान काहे का? जब एकेन्द्रिय के अवतार में गाजर-मूली में अवतरा था और शाकभाजी बेचनेवाले के यहाँ गाजर-मूली के ढेर में पड़ा था; शाक खरीदनेवाले के साथ में छोटा बच्चा भी आया; शाक लेने के उपरान्त उसने एक गाजर या मूली मुफ्त में माँगी और शाकवाले ने वह दे दी; तब उसमें वनस्पतिकाय रूप से तू बैठा था; सो तू भी गाजर-मूली के साथ में मुफ्त में चला गया। इसप्रकार अनन्तबार मुफ्त के भाव में बिका; अतः अब मनुष्य होकर मान-अपमान की कल्पना में जीवन को व्यर्थ क्यों गँवा रहा है? भाई ! अल्पकाल के इस मनुष्य अवतार में आत्महित के लिए कार्य करने की दरकार कर।

कोई जीव लगातार मनुष्य के ही अवतार करे तो अधिक से अधिक आठ भव हो सकते हैं, उसके बाद वह अवश्य मनुष्य के अतिरिक्त किसी अन्य गति में चला जाता है। त्रसपने की उत्कृष्ट स्थिति दो हजार सागरोपम मात्र है; उनमें तो द्वीन्द्रियादि के भी अवतार आ जाते हैं। पंचेन्द्रिय और उसमें भी मनुष्य होना वह तो अतिदुर्लभ है, उसमें भी सच्चा वीतरागी धर्म समझने का अवसर महान दुर्लभता से मिलता है।

इस सम्पूर्ण दुर्लभता का वर्णन कार्तिकेयस्वामी ने बोधिदुर्लभ अनुप्रेक्षा में किया है।

संसार में जीव का दीर्घकाल तो निगोद में ही बीता। आलू-शकरकन्द आदि के छोटे से सरसों के बराबर टुकड़े में असंख्यात औदारिक शरीर हैं; उनमें से हर एक शरीर में अनन्त जीव हैं; अभी तक के अनन्तकाल में जो अनन्त सिद्ध हुए, उनसे अनन्तगुने निगोद जीव हर एक शरीर में हैं। उसमें से निकलकर त्रसपर्याय का पाना अर्थात् लट-चींटी आदि होना भी चिन्तामणि के समान दुर्लभ है। यह बात अब आगे के श्लोक में कहते हैं।

संसार में भ्रमण करते हुए जीव को पंचेन्द्रिय होकर सम्यक्त्वादि प्राप्त करना तो कोई अपूर्व चीज है; यहाँ तो एकेन्द्रिय से त्रसपर्याय पाने की दुर्लभता बताते हैं।

दुर्लभ लहि ज्यों चिन्तामणि, त्यों पर्याय लही त्रसतणी।
लट-पिपील-अलि आदि शरीर, धर धर मर्यो सही बहु पीर।।५।।

जैसे चौक (चौराहा) के बीच में चिन्तामणिरत्न की प्राप्ति होना दुर्लभ है, वैसे ही निगोद और एकेन्द्रिय से निकलकर दो इन्द्रिय-तीन इन्द्रिय-चतुरिन्द्रिय (लट-चींटी-भँवरा) रूप त्रसपर्याय भी अति दुर्लभता से प्राप्त होती है और उसमें देह धारण करके जीव बहुत पीड़ा सहन करता है। लट-चींटी आदि जीवों को महान दुःख है, नरक से भी अधिक दुःख उनको है। उन्हें न तो पाँच इन्द्रियों की पूर्णता है और न विचारशक्ति ही; अतः उन जीवों को 'विकल' कहा जाता है। एकेन्द्रिय में से निकलकर क्वचित् विकलत्रय में आये, तब भी हाथी वगैरह के पैर से कुचलकर मर जाये, पानी में बह जाये, अग्नि में भस्म हो जाये, चिड़ियाँ आदि खा जायें; ऐसे अत्यन्त पीड़ा सहित मरकर फिर एकेन्द्रिय में ऊपजे। विकलत्रय में रहने का उत्कृष्टकाल कोटिपूर्व है। विकलत्रय से पंचेन्द्रिय होना दुर्लभ है।

देखो ! ऐसी दुर्लभता दिखाकर क्या कहना चाहते हैं? ऐसा कहते हैं कि रे जीव ! जिस भाव के कारण अनन्त दीर्घकाल तक एकेन्द्रियादि के अवतार में ऐसे दुःख सहन किये, उस मिथ्यात्वादि भाव का त्याग करके मोक्षसुख का साधन करने हेतु तुझे यह अवसर मिला है। फिर ऐसा अवसर मिलना बहुत कठिन है; अतएव जागृत होकर ऐसा भेद-विज्ञान कर कि फिर कभी संसार के ऐसे दुःख स्वप्न में भी न हों। तूने बहुत दुःख भोगे, अब तो उनके अन्त का उपाय कर !

जैसे मनुष्य को चिन्तामणिरत्न क्वचित् महत्पुण्य से मिलता है, बार-बार नहीं मिलता; वैसे ही संसारसमुद्र में जीवों को एकेन्द्रिय से दोइन्द्रिय होना भी चिन्तामणि से अधिक दुर्लभ है, तो पंचेन्द्रिय होने की तो क्या बात? क्वचित् कोई जीव विशुद्ध परिणाम के बल से एकेन्द्रिय से निकलकर त्रस में आते हैं। अरे ! चींटी या लट होना भी जहाँ दुर्लभ है, वहाँ मनुष्यपने की दुर्लभता का क्या कहना? भाई ! तुम तो अब मनुष्य भव से भयभीत होकर ऐसा उपाय करो कि आत्मा चार गति के दुःखों से छूटे। **(क्रमशः)**

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : आप पुण्य को हेय क्यों कहते हैं ?

उत्तर : श्री योगीन्दुदेव ने कहा है कि हिंसा-झूठ-चौर्यादि तो पापभाव हैं ही, परन्तु दया-दान-पूजा-भक्ति आदि के शुभभाव भी परमार्थ से पाप हैं; क्योंकि वे जीव को स्वरूप से पतित करते हैं। अहा ! पाप को तो सभी पाप कहते हैं, परन्तु अनुभवी जीव तो पुण्य को भी पाप कहते हैं। बहुत सूक्ष्म बात है ह्न अन्तर से समझे तो समझ में आए ह्न ऐसी बात है।

पापभाव को पाप तो जानत हैं सब लोय।
पुण्यभाव भी पाप हैं, जाने विरला कोय।।

प्रश्न : शुभभाव को हेय मानते हुए बीच में अशुभभाव आ जाय तो ?

उत्तर : अशुभभाव तो सम्यक्त्वी को भी आता है, आर्त्त-रौद्र ध्यान भी होता है। शुभ को हेय मानते हुए श्रद्धा का बल कहाँ है ह्न यह बात देखने की है।

प्रश्न : शास्त्र में पुण्य को हेय कहा है, तो क्या हमारी अब तक की गई पूजा-भक्ति-व्रतादि पानी में गए ?

उत्तर : नहीं, नहीं, पानी में नहीं गए ह्न व्यर्थ नहीं गए। इन पूजा-भक्ति-व्रतादि से पुण्य बँधता है और उससे भव मिलता है; परन्तु भवरहित नहीं होते।

प्रश्न : तब हमें पूजा-भक्ति आदि करना चाहिए या नहीं ?

उत्तर : करने न करने की बात नहीं है। करने योग्य कार्य तो राग से भिन्नता करके एकमात्र आत्मा की अनुभूति करना ही है। आत्मा ज्ञानस्वरूप पूर्णानन्द प्रभु है, उसके सन्मुख ढलने पर धर्मीजीव को जबतक पूर्ण स्थिरता न हो तबतक पूजा-भक्ति-व्रतादि का शुभराग आता है, होता है, भूमिकानुसार शुभराग आए बिना रहता नहीं; किन्तु धर्मीजीव उसको धर्म या धर्म का कारण नहीं मानता, वह शुभराग पुण्यबन्ध का कारण है ह्न ऐसा जानता है।

विधान एवं शिविर सम्पन्न

देवलाली (महा.) : यहाँ मोहनलाल शाह की स्मृति में हँसमुखभाई शाह परिवार द्वारा दिनांक 24 से 28 दिसम्बर 06 तक पंचपरमेष्ठी विधान एवं शिक्षण शिविर का आयोजन हुआ।

प्रतिदिन प्रात: गुरुदेवश्री के सी. डी. प्रवचनोपरान्त डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के अलिंग-ग्रहण पर मार्मिक प्रवचन हुए। इसके अतिरिक्त पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री, पण्डित हेमचन्दजी हेम भोपाल, पण्डित दिनेशभाई शहा मुम्बई, पण्डित अनुभवप्रकाशजी मुम्बई, विदुषी उज्ज्वलाबेन शहा मुम्बई एवं विदुषी अनुप्रेक्षा जैन मुम्बई का प्रवचनों एवं कक्षाओं के माध्यम से लाभ मिला।

विधानादि के कार्य पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली के निर्देशन में पण्डित निखिलजी शास्त्री कोतमा, पण्डित आशीषजी शास्त्री मौ एवं पण्डित राजकुमारजी बरगी ने कराये।

पंचकल्याणक की वर्षगाँठ मनाई

कोलकाता (पं.ब.) : श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट के तत्त्वावधान में दिनांक 28 दिसम्बर, 06 से 1 जनवरी, 07 तक श्री 1008 महावीरस्वामी पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव की प्रथम वर्षगाँठ के पावन प्रसंग पर पंच विधान, व्याख्यानमाला एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों का भव्य आयोजन किया गया।

इस प्रसंग पर पाँच दिनों में श्री सीमंधर विधान, श्री आदिनाथ विधान, श्री भरत-बाहुबली विधान, श्री शांतिनाथ विधान एवं श्री महावीरस्वामी विधान का आयोजन किया गया।

दिनांक 28 दिसम्बर को विशाल जिनेन्द्र शोभायात्रा के उपरान्त श्री नेमीचन्दजी पाण्ड्या परिवार द्वारा जिनमंदिर के शिखर पर ध्वजारोहण हुआ।

विधि-विधान के समस्त कार्य ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री के सान्निध्य में पण्डित मनीषजी शास्त्री पिड़ावा, पण्डित सुबोधजी शास्त्री शाहगढ़ एवं पण्डित अभिनयजी शास्त्री जबलपुर के मधुर स्वरों तथा सीमंधर संगीत सरिता छिन्दवाड़ा द्वारा आध्यात्मिक भजनों सहित सम्पन्न हुये।

इस मांगलिक अवसर पर पण्डित संजीवकुमारजी गोधा, जयपुर के प्रतिदिन दोनों समय ग्रन्थाधिराज समयसार पर सरस शैली में मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला। एक दिन ब्र. कैलाशचन्दजी 'अचल' का प्रवचन हुआ।

एक दिन पं. अभिनयजी शास्त्री द्वारा निर्देशित 'पुण्य-पाप अदालत में' नाटिका का मंचन हुआ तथा उन्हीं के सान्निध्य में वीतराग-विज्ञान पाठशाला के बालकों द्वारा लघु कार्यक्रमों की ज्ञानवर्धक प्रस्तुति की गई।

सभी कार्यक्रम बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री के निर्देशन एवं श्री हर्षदभाई शाह के संचालन में सम्पन्न हुये। कार्यक्रम में मुमुक्षु मण्डल के प्रमुख श्री बालचन्दजी पाटनी एवं श्री कुन्दकुन्द कहान दि. जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट के समस्त पदाधिकारियों का सहयोग रहा।

आध्यात्मिक सुसंस्कार शिविर सम्पन्न

स्तवनिधी (बेलगाँव-कर्ना.) : यहाँ श्री पार्श्वनाथ ब्रह्मचर्याश्रम जैन गुरुकुल स्तवनिधी में श्री अखिल भारतीय दिगम्बर जैन सर्वोदय स्वाध्याय समिति, कोल्हापुर के तत्त्वावधान में दिनांक 24 से 30 दिसम्बर, 2006 तक आध्यात्मिक सुसंस्कार शिविर सानन्द सम्पन्न हुआ।

शिविर का उद्घाटन दि. 24 दिसम्बर को डॉ. विलासजी संगवे (डी.लिट्) कोल्हापुर तथा ध्वजारोहण श्री बी.आर.चौगुले स्तवनिधी के करकमलों से किया गया।

शिविर में प्रतिदिन प्रात: ब्र. यशपालजी जैन, जयपुर के प्रवचनसार- चरणानुयोग चूलिका अधिकार एवं रात्रि में समयसार कलश 110 के आधार से मिश्रधर्म पर सारगर्भित प्रवचन हुए।

आपके अतिरिक्त प्रतिदिन तीन सत्रों में पण्डित जितेन्द्रजी राठी जयपुर के समयसार गाथा-186 पर तथा पण्डित रोहनजी रोटे बाहुबली, पण्डित प्रसन्नजी शेटे कोल्हापुर, पण्डित अभिजीतजी अलगौंडर शेडबाल के भी सारगर्भित प्रवचनों का लाभ मिला।

दोपहर की व्याख्यानमाला में पण्डित जिनचन्दजी आलमान, पण्डित राजेन्द्रजी सांगावे, पण्डित शांतिनाथजी मगदूम, पण्डित संतोषजी मिणचे, पण्डित सुरेन्द्रजी पाटील, पण्डित आलाप्पाजी हादीमणी, पण्डित दीपकजी अथणे के व्याख्यान हुए।

साथ ही गुरुकुल के विद्यार्थियों के लिए पण्डित रोहनजी रोटे द्वारा छहढ़ाला, पण्डित प्रसन्नजी शेटे द्वारा जिनधर्म प्रवेशिका एवं पण्डित अभिजीतजी अलगौंडर द्वारा सामान्य तत्त्वज्ञान की कक्षा ली गई। प्रतिदिन प्रात: श्रीमती अश्विनीजी शेटे कोल्हापुर ने योग पर कक्षा ली।

इस अवसर पर संगीतमय 170 तीर्थंकर विधान का आयोजन पण्डित सुरेन्द्रजी पाटील माणकापुर के निर्देशन में सम्पन्न हुआ।

दिनांक 30 दिसम्बर को समापन समारोह की अध्यक्षता श्री श्रीधरजी हेरवाडे (सम्पादक-सन्मति मासिक) ने की। सभा का संचालन पण्डित जिनचन्दजी आलमान ने किया।

शिविर व विधान आमन्त्रणकर्त्ता श्रीमती इन्दुमति अण्णासाहेब खेमलापुरे घटप्रभा एवं श्री बापूसाहेब कल्लापाजी नरदेकर कुपवाड़ थे। **ह्न शांतिनाथ खोत**

बालकों के लिये एक और उपहार

आचार्य कुन्दकुन्द सर्वोदय फाउन्डेशन, जबलपुर द्वारा बाल वर्ग में तत्त्वज्ञान एवं नैतिक संस्कारों के लिये किये जा रहे प्रयासों के अन्तर्गत धार्मिक बालगीत कैसिट '**वीर प्रभु की हम संतान**' (चौथा पुष्प) एवं त्रैमासिक पत्रिका '**चहकती चेतना**' का विमोचन बाँसवाडा में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के अवसर पर किया गया।

पण्डित विराग शास्त्री, जबलपुर द्वारा संपादित इस बालपत्रिका का तीन वर्षीय सदस्यता शुल्क 250/- रुपये रखा गया है। इच्छुक व्यक्ति निम्न पते पर सम्पर्क कर बालगीत कैसेट एवं त्रैमासिक पत्रिका प्राप्त कर सकते हैं। ह्न 702, जैन टेलीकॉम, फूटाताल, जबलपुर (म.प्र.)

जैन बाल संस्कार ग्रुप शिविर संपन्न

दिल्ली : यहाँ अध्यात्मतीर्थ आत्म साधना केन्द्र (आत्मार्थी ट्रस्ट) दिल्ली के तत्त्वावधान में दिनांक 24 से 31 दिसम्बर, 06 तक शीतकालीन 'जैन बाल संस्कार ग्रुप शिविर' का आयोजन किया गया; जिसमें दिल्ली, उत्तरप्रदेश एवं हरियाणा के कुल 22 स्थानों पर एक साथ शिविर लगा।

सम्पूर्ण शिविर श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय, जयपुर के निम्नांकित 31 विद्वानों के सहयोग से अनेक उपलब्धियों के साथ सानन्द सम्पन्न हुआ।

जिसके अन्तर्गत **आत्मार्थी ट्रस्ट दिल्ली में** पं. धर्मेन्द्रजी शास्त्री जयपुर, **मॉडल बस्ती में** पं. प्रतीकजी शास्त्री राँझी, **राजा बाजार में** पं. अभिलाषजी शास्त्री कोटा, **शिवाजी पार्क में** पं. नितिनजी शास्त्री खडैरी एवं पं. उमेशजी शास्त्री अक्कीवाट, **बैंक एन्क्लेव में** पं. सुमितजी शास्त्री टीकमगढ़, **मोरी गेट में** पं. अभिषेकजी शास्त्री केलवाड़ा, **विश्वास नगर में** पं. चैतन्यजी शास्त्री बकस्वाहा, **रोहिणी नगर में** पं. पंकजजी दहातोंडे परली, **शंकर नगर में** पं. अनेकान्तजी शास्त्री मुम्बई, **पीरागढ़ी में** पं.विजयजी शास्त्री मोडी, **चाँदनी चौक में** पं. कीर्तिकुमारजी पाटील वसगडे, **पुष्पांजलि एन्क्लेव में** पं. नितिनजी शास्त्री सेमारी, **छपरौली में** पं. शैलेन्द्रजी शास्त्री पण्डा, **बहादुरगढ़ में** पं. नितिनजी शास्त्री सेमारी एवं पं. अविनाशजी पाटील शेडबाल, **फरीदाबाद में** पं. अभिजीतजी पाटील वसगडे, **खेकड़ा में** पं. संतोषजी शास्त्री बकस्वाहा एवं पं. धवलजी गांधी नातेपुते, **नोएडा में** पं. विनयजी शास्त्री बूँदी एवं पं. सौरभजी शास्त्री कर्रापुर, **गंगेरू में** पं. मिलिन्दजी केटकाले कबनूर, **खतौली में** पं. तन्मयजी शास्त्री खनियांधाना एवं पं. अंकितजी शास्त्री कोलारस, **सहारनपुर में** पं. वीरचन्दजी शास्त्री लांडनू, **मेरठ में** पं. विवेकजी शास्त्री सागर एवं पं. रमेशजी शास्त्री नल्लूर, **सोनागिर में** पं. सचिनजी शास्त्री गढ़ी आदि विद्वानों द्वारा सभी स्थानों पर तीनों समय प्रवचन, प्रौढ़-बाल कक्षा, जिनेन्द्र पूजन, सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि के माध्यम से महती धर्मप्रभावना हुई।

शिविर में कुल 1000 बच्चों एवं 800 महिला-पुरुषों ने तत्त्वज्ञान का रसास्वादन किया। अंतिम दिन सभी स्थानों पर परीक्षा ली गई।

1 जनवरी 07 को आत्मार्थी ट्रस्ट में रत्नत्रय मंडल विधान के साथ ही शिविर समापन सामारोह एवं नूतन वर्षाभिनंदन का कार्यक्रम रखा गया। इस अवसर पर पण्डित धर्मेन्द्रजी शास्त्री जयपुर के प्रवचन का लाभ मिला। विधि विधान पं. संजीवजी एवं पं. राकेशजी शास्त्री दिल्ली ने संपन्न कराये।

सम्पूर्ण शिविर बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद के निर्देशन तथा पं. निकलंकजी शास्त्री कोटा एवं पं. आशीषजी शास्त्री टीकमगढ़ के कुशल संयोजकत्व में सम्पन्न हुआ। ●

सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका तैयार

आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती विरचित गोम्मटसार ग्रन्थ की पण्डित टोडरमलजी द्वारा लिखित ढूंढारी भाषा में रचित सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका टीका, जिसका हिन्दी अनुवाद डॉ. उज्ज्वला शहा, मुम्बई ने किया है; छपकर तैयार है।

1100 पृष्ठों में अनुवादित यह कृति दो भागों में छपकर तैयार है। जो भी जिज्ञासु महानुभाव इन दोनों भागों को प्राप्त करना चाहते हैं, वे 125/-रुपये कृति मूल्य एवं 25/-रुपये डाकखर्च - इसप्रकार 150/- रुपये अपने नाम एवं पते सहित निम्न पते पर भेजकर प्राप्त कर सकते हैं -

ह्न पं. दिनेशभाई शाह, 157/9, निर्मला निवास, सायन (पू.) मुम्बई, फोन-24073581

चैतन्यधाम में चैतन्य की गूँज

अहमदाबाद (गुज.) : अ. भा. जैन युवा फैडरेशन, प्रांतीय शाखा गुजरात द्वारा 22 से 27 दिसम्बर 06 तक **चैतन्यधाम** में अष्टम तत्त्वज्ञान शिक्षण-शिविर का आयोजन हुआ।

यहाँ सुबह 5.30 से रात्रि 10 बजे तक निरंतर तत्त्वज्ञान की अविरल धारा प्रवाहित हुई, जिसमें पण्डित शांतिकुमारजी पाटील जयपुर, पण्डित शैलेषभाई तलोद, पण्डित बाबूभाई फतेपुर, पण्डित निलेषभाई मुम्बई एवं पण्डित इन्दुभाई मोरबी ने सरल-सुबोध शैली में कक्षाएँ ली।

कार्यक्रम का संचालन अनीभाई ताराचंद गाँधी एवं मंत्री मुकेशभाई ने किया। कार्यक्रम में **चैतन्यधाम** के समस्त ट्रस्टीगणों एवं अमृतभाई मेहता का विशेष सहयोग रहा। शिविर श्री राजकुमारजी जैन (सोगानी) भीवंडी के सौजन्य से लगाया गया। **ह्न प्रतीक भाटा**

हार्दिक बधाई

1. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यू.जी. सी.) नई दिल्ली द्वारा लेक्चरशिप के लिये आयोजित राष्ट्रीय पात्रता परीक्षा (नेट) में श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक **श्री विनीतजी शास्त्री ग्वालियर** ने सफलता प्राप्त की।

2. श्री टोडरमल दि. जैन सि. महाविद्यालय के स्नातक **श्री रितेशजी शास्त्री डडूका** द्वारा राजस्थान लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित हिन्दी प्राध्यापक परीक्षा में सफलता अर्जित की। आप वर्तमान में संस्कृत विद्यालय नई बस्ती, लोधा, बाँसवाड़ा में प्रधानाध्यापक हैं।

3. श्री टोडरमल दि. जैन सि. महाविद्यालय के स्नातक **श्री स्वप्निल जैन शास्त्री का सौ. नितिशा जैन, नागपुर** के साथ दिनांक 5 दिसम्बर को विवाह सम्पन्न हुआ। विवाहोपलक्ष में आपकी ओर से 200/- रुपये की दानराशि प्राप्त हुई; एतदर्थ धन्यवाद !

4. श्री धनसिंहजी जैन पिड़ावा की सुपुत्री सौ. का. शुद्धात्मप्रभा के विवाह (13 दिसम्बर-06) प्रसंग पर बधाई। आपकी ओर से 100/- रुपये की दानराशि प्राप्त हुई। ज्ञातव्य है कि आप महाविद्यालय के विद्यार्थी विवेक शास्त्री की बहिन हैं।

शिविर एवं स्नेह-सम्मेलन मनाया

मुम्बई : यहाँ इस्टर्न मॉल, मलाड (पूर्व) में दिनांक 17 दिसम्बर 06 को के.के. पी.पी.एस. उज्जैन के तत्त्वावधान में शिविर एवं स्नेह-सम्मेलन मनाया गया।

शिविर में पण्डित विमलदादाजी झांझरी उज्जैन, डॉ. उत्तमचन्दजी जैन सिवनी, पं. अभयजी शास्त्री देवलाली, पं. रमणीकभाई सांवला, पं. विरागजी जैन आदि विद्वानों के प्रवचन हुये। सम्मेलन में पं. प्रदीपजी झांझरी, पं. नागेशजी पिड़ावा, पं. हेमचन्दजी हेम, ब्र. अभिनंदनजी शास्त्री, पं. अशोकजी लुहाडिया, पं. स्वानुभवजी शास्त्री एवं पं. ज्ञायक शास्त्री आदि उपस्थित थे।

अध्यक्षता श्री के.सी.जैन छाबड़ा ने की। मुख्यअतिथि श्री जे.के.जैन काला थे। शिविर का संयोजन श्री अरहंतप्रकाशजी झांझरी उज्जैन एवं डॉ. सुभाषजी चांदीवाल मुम्बई ने किया।

वेदी शिलान्यास कार्यक्रम

सिवनी (म.प्र.) : यहाँ श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल स्वाध्याय मन्दिर में 3 एवं 4 जनवरी 07 को श्री पंचबालयति मण्डल विधान एवं वेदी शिलान्यास का आयोजन हुआ।

आयोजन में पं. राजेन्द्रजी जबलपुर, पं. ऋषभजी शास्त्री छिंदवाड़ा, पं. राजेन्द्रजी बंसल अमलाई, पं. सुबोधजी शास्त्री शाहगढ़, पं. श्रेणिकजी जबलपुर एवं इंजि. संजयजी खनियाँधाना के प्रवचनों का लाभ मिला। शिलान्यासकर्ता डॉ. के. सी. भारिल्ल परिवार सिवनी थे।

विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्यक्रम पण्डित विरागजी शास्त्री जबलपुर के निर्देशन में पण्डित निखिलजी शास्त्री कोतमा एवं पण्डित राजकुमारजी बरगी ने सम्पन्न कराये।

वैराग्य समाचार

1. भुसावल निवासी **श्री बाबूलालजी तोतारामजी जैन, लुहाडिया** का दिनांक 23 नवम्बर 06 को 74 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। आप जिनधर्म के प्रचार-प्रसार में सदैव तत्पर रहते थे। भुसावल में दि. जैन मंदिर (नूतन) में आपने जिनवाणी हॉल, त्यागी निवास, सभागृह का निर्माण कराया एवं अपने जीवन बीमा के 3 लाख रुपये भी मंदिर को दान दिये।

2. अशोकनगर निवासी **पण्डित बाबूलालजी लालोनी** का दिनांक 14 दिसम्बर, 06 को शान्त परिणामों से देहावसान हो गया है। आपकी स्मृति में सुपुत्र श्री केवलचन्द अशोककुमार लालोनी की ओर 151/- रुपये प्राप्त हुये।

3. विहिगाँव (महा.) निवासी **श्री मदनलालजी जैन** का 27 नवम्बर 06 को 81 वर्ष की आयु में देहविलय हो गया है। आपकी स्मृति में दिनेशकुमार जैन द्वारा 101/-रुपये प्राप्त हुये।

4. पाण्डिचेरी निवासी **श्री मेघराज कोठारी** का दिनांक 3 दिसम्बर को देहविलय हो गया है। आप सरल स्वभावी थे एवं टोडरमल स्मारक भवन लगने वाले शिविरों में ज्ञानार्थ आते रहते थे। आपकी स्मृति में श्री गजराज राजकुमारजी की ओर से 1100/- रुपये प्राप्त हुये।

5. जयपुर निवासी **श्री कपूरचन्द जैन** का दिनांक 1 दिसम्बर को देहावसान हो गया। आप महाविद्यालय के छात्र अनुज शास्त्री के दादाजी थे। आपकी स्मृति में 200/- रुपये प्राप्त हुये।

श्री दिग. जैन कुन्दकुन्द स्मृति ट्रस्ट, अलवर के तत्त्वावधान में

श्री नेमिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव

(गुरुवार, १५ फरवरी से बुधवार, २१ फरवरी २००७ तक)

परमोल्लास एवं हर्ष के साथ सूचित करते हैं कि अन्तिम अनुबद्ध केवली भगवान जम्बूस्वामी की निर्वाणस्थली मथुरा एवं भगवान चन्द्रप्रभ के प्रसिद्ध अतिशय क्षेत्र देहरा-तिजारा के निकट अवस्थित राजस्थान के सिंहद्वार अलवर में अरावली पर्वतमालाओं के अंचल में नव विकसित चेतन एन्क्लेव कॉलोनी में **आध्यात्मिक सत्पुरुष श्री कानजीस्वामी** के धर्म प्रभावना योग से निर्मित श्री १००८ रत्नत्रय दिगम्बर जिनमंदिर का पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव गुरुवार, १५ फरवरी से बुधवार, २१ फरवरी, ०७ तक सम्पन्न होने जा रहा है।

कार्यक्रम की सम्पूर्ण प्रतिष्ठाविधि बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री, सनावद के प्रतिष्ठाचार्यत्व एवं ब्र. धन्यकुमारजी बेलोकर, पण्डित शांतिकुमारजी पाटील, पण्डित मधुकरजी जलगाँव, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बाँसवाड़ा एवं पण्डित सुबोधजी शास्त्री शाहगढ़ के सह-प्रतिष्ठाचार्यत्व में सम्पन्न होगी।

इस अवसर पर जिनवाणी की अविरलधारा प्रवाहित करने हेतु अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त विद्वान विद्यावारिधि डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, डॉ. उत्तमचन्दजी सिवनी, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, पण्डित राजेन्द्रजी जैन जबलपुर, पण्डित संजीवकुमारजी गोधा जयपुर आदि अनेक विशिष्ट विद्वान पधार रहे हैं।

जिनधर्म प्रभावना के सर्वोत्कृष्ट निमित्तभूत इस महायज्ञ में समस्त साधर्मियों को सपरिवार, इष्ट-मित्रों सहित पधारकर धर्मलाभ लेने हेतु हमारा वात्सल्यपूर्ण हार्दिक आमंत्रण है।

निवेदक

सकल जैन समाज अलवर एवं

श्री नेमिनाथ दि. जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव समिति

श्री रत्नत्रय दि. जिनमंदिर, चेतन एन्क्लेव फेज-2, जयपुर रोड, अलवर (राज.)

मो. 9414893111, 9413303464, 9828505601, 9352771008